।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

।। बीज तथा मंत्र ।।

आगमशास्त्र ही वह मूल, प्रामाणिक तथा सर्वमान्य ग्रन्थ हैं जिनमें जपयोग्य बीजों(एकाक्षर मंत्र) तथा मंत्रों (एक से अधिक बीज एवं मातृकाक्षरों का समूह) काविशद विवेचन किया गया है। हमारे ऋषि मुनियों, तपस्वियों, साधकों तथा गुरूओंने हजारों वर्षो की विकट साधना तथा आध्यात्मिक अनुसन्धान के पश्चात् ऐसेअसंख्य बीजों तथा मंत्रों की संरचना (खोज) की है जिनका निर्धारित संख्या मेंजप करने से साधक को उस मंत्र के अधिष्ठाता देव-देवियों का दर्शन लाभ प्राप्त हो जाता है। जपयोग्य किसी भी बीज तथा मंत्र की संरचना में वर्णाक्षरों(मातृकाक्षरों) का उपयोग होता है। वर्णाक्षरों (अ से अः तथा क से क्ष तक) मेंअनन्त शक्ति निहित होती है। प्रत्येक वर्ण स्वयं में एक शक्तिपुंज है क्योंकि प्रत्येकवर्ण किसी न किसी देवी-देवता तथा तत्वों का प्रतीक होता है। हमारे गुरूओं नेविभिन्न वर्णाक्षरों (अर्ध तथा पूर्ण वर्ण) को विशेष प्रकार से आपस में संयोजितकरके ऐसे असंख्य मंत्रों को प्रकट किया है जिनका सही उच्चारण तक कर पानासामान्य व्यक्ति के लिए असम्भव होता है -

"अर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः"

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष: 9044016661

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

मंत्र-शास्त्र के अनुसार ल-पृथ्वीतत्व, व-जलतत्व, र-अग्नितत्व य-वायुतत्व तथा ह-आकाशतत्व को निरूपित करता है। वर्णों को आपस में मिलाकर ह् र् ई म्मायाबीज तथा क् ल् ई म् कामबीज बनता है। ऐसे ही कुछ बीज तथा कुछमातृकाक्षरों को मिलाकर मंत्र बन जाता है। नौ वर्णों का चन्डी मंत्र नवार्णमंत्र केनाम से विख्यात है। सामान्य रूप से एकाक्षर मंत्र को बीजमंत्र तथा अनेकवर्णाक्षरों से युक्त मंत्र को मंत्र कहते हैं। जिस मंत्र में बहुत अधिक वर्णाक्षरसम्मिलित हो जाते हैं उसे 'मालामंत्र' कहा जाता है। जिस प्रकार अत्यन्त लघुबीजके अन्दर विशाल वृक्ष विद्यमान रहता है उसी प्रकार एक अक्षर (बीज) के अन्दरउस बीज से सम्बन्धित देवता का वास होता है जो निर्धारित संख्या में जप किएजाने पर साधक के समक्ष उपस्थित हो जाता है। यह अभ्यास का विषय है। तर्कका नहीं।

।। मंत्र की आवश्यकता ।।

हमारे धर्मशास्त्रों में बताया गया है कि कोई भी आध्यात्मिक (धार्मिक) कार्यअथवा अनुष्ठान बिना किसी देवता को साक्षी बनाये तथा बिना किसी मंत्र काआश्रय लिए पूर्ण नहीं हो सकता है। जन्म से मृत्युपर्यन्त जितने भी कर्म-संस्कारतथा धार्मिक अनुष्ठानादि किए जाते हैं वे सभी किसी न किसी मंत्र का आश्रयलेकर ही पूर्ण हो सकते हैं क्योंकि उस मंत्र का अधिष्ठाता देव-देवी ही हमारे सकाम अथवा निष्काम कर्मों का

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

सुफल प्रदान करते हैं। जिस प्रकार अष्टांग योग की कियाऐं (अभ्यास) तथा औषधियों का सेवन प्रत्यक्षरूप से फलप्रद होता है उसी प्रकार मंत्र की शक्ति भी प्रत्यक्ष फलदाई होती है। शर्त यही है कि वह मंत्र किसी ग्रन्थ से नकल किया हुआ न होकर सिद्ध गुरू से प्राप्त हुआ होना चाहिए। जो व्यक्ति पुस्तकों से प्राप्त मंत्रों का जप करते हैं उन्हें कोई लाभ नहीं हो सकता है वरन् पग-पग पर शारीरिक एवं मानसिक ब्याधियों का शिकार होना पड़ता है :-

"पुस्तके लिखितो मंत्रो-येन सुन्दरि ! जप्यते

न तस्य जायते सिद्धि-हानिरेव पदे पदे।। (चामुन्डा तंत्र)

"पुस्तके लिखिता मंत्रान्-विलोक्य प्रजपन्ति ये

ब्रह्महत्या समं तेषां-पातकं परिकीर्तितम्"

(जो व्यक्ति पुस्तकों से प्राप्त मंत्र जपते हैं उन्हें ब्रह्महत्या के समान पाप का भागीहोना पड़ता है।)

।। मंत्र का अभिप्राय ।।

विभन्न मंत्रशास्त्रों में मंत्र को अनेक प्रकार परिभाषित किया गया है :-

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

"मननाद् विश्वविज्ञानं-त्रांणसंसार बन्धनात्

त्रायते सतंत चैव तस्मांन्मत्र इतीरित:।।

(जिसका मनन करने से समस्त ब्रह्मान्ड का ज्ञान हो जाता है, साधक सांसारिक बन्धन से छूट जाता है तथा जो रोग-शोक, भय, दु:ख एवं मृत्यु से सदैव रक्षा करता है उसको ही मंत्र कहते हैं।)

"मनना प्राणनां चैव-मद्रूपस्याव बोधनात्

त्रायते सर्वभयत:-तस्मान्मंत्र इतीरित।।"

(जो साधक की सभी भयों से रक्षा करता है तथा जिसका चिन्तन-मनन करने सेआत्मतत्व-शिवरूप का बोध हो जाता है उसी को मंत्र कहते हैं।)

भगवान शंकर माँ पार्वती को बताते हैं कि मंत्र तथा मंत्रार्थ को समझने वालासाधक समस्त सिद्धियों का स्वामी ही नहीं वरन् ईश्वरत्व प्राप्त करके जीवन्मुक्त होजाता है। अत: साधक को सदैव मंत्र-जप में तत्पर रहना चाहिए।

बीज तथा मंत्र की महिमा का यशोगान करते हुए भगवान शंकर माँ पार्वती सेकहते हैं:-

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

"सर्वेषामेव देवांनामंत्रमाद्य शरीरकम्

ध्यानेन दर्शनं दत्वा-पुनर्मंत्रेषु लीयते"

बीज तथा मंत्र ही देवता का प्रथमरूप (आदिशरीर) है। बीज-मंत्र के जप सेसम्बन्धित देवता प्रकट होकर साधक को दर्शन देते हैं और पुन: उसी बीज-मंत्र मेंसमा जाते हैं।

।। मंत्रों के विभिन्न दोष तथा उनका संस्कार (शुद्धिकरण) ।।

प्रमुंख आगम-ग्रन्थ 'प्राणतोषिणी तंत्र' में मंत्रो के विभिन्न दोषों तथा उन दोषों से मंत्र को शुद्ध (दोषमुक्त) करने के उपायों (संस्कारों) का विस्तार से विवरण दिया गया है। दोषयुक्त मंत्र उसे कहते हैं जो -

"बहुकूटाक्षरो मुग्धो-बद्धः क्रुद्धश्च भेदित:

निस्नेहो विकल: स्तब्धो-निर्जीव: खन्डतारिक: "

(बहुत कूटाक्षर वाला, मुग्ध, बद्ध, क्रुद्ध, भेदित, कुमार, युवा, बृद्ध गर्वित,स्तम्भित:, मूर्छित, खन्डित, बधिर, अन्ध, अचेतन, क्षुधित, दुष्ट, पीड़ित, निस्नेह,विकल, स्तब्ध, निर्जीव तथा खण्डतारिक मंत्र दोषपूर्ण होता है।)

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

मंत्र के अन्य दोष इस प्रकार है :-

"सुप्त: तिरस्कृतो लीढ,-मलिनश्च दुरासद:

जड़ो रिपु उदासीनो-लज्जितो मोहित प्रिये"

(भगवान शिव कहते हैं कि जो मंत्र सुप्त, तिरस्कृत, लीढ, मलिन, दुरासद, निसत्व, निर्दयी, दुग्ध, भयंकर, शप्त, रूक्ष, जड़, शत्रु, उदासीन, लज्जित तथा मोहित होते हैं वे भी दोषपूर्ण होते हैं)

भगवान शिव द्वारा उपरोक्त प्रकार बताए गए दोषपूर्ण मंत्रोको जप आरम्भ करनेसे पहले शुद्ध करना आवश्यक होता है। इसी मंत्र-शुद्धिकरण को ही मंत्रो कासंस्कार कहते हैं। दोषयुक्त मंत्र का करोड़ों संख्या में जप करने से भी मंत्र-सिद्धिनहीं हो सकती है। तंत्र-शास्त्रों में मंत्र-शुद्धिकरण के लिए 10-संस्कारों काउल्लेख मिलता है। यथा –

"जनंन जीवनं पश्चात्-ताड़ंन बोधनं तथा।

तर्पणं दीपंन गुप्ति-संस्कारा कुल नायिके'।।

(दोषयुक्त मंत्र को शुद्ध करने के लिए जो 10-संस्कार किए जाते हैं उनके नाम हैंजनन, जीवन, ताड़न, बोधन, अभिषेक, विमलीकरण, आप्यायन, तर्पण, दीपन,गुप्ति।)

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष: 9044016661

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

शास्त्र बताते हैं कि जिस प्रकार अस्त्र-शस्त्रों पर धार लगाकर उन्हें तेज तथाधारदार बनाया जाता है उसी प्रकार मंत्र के 10-संस्कार करके उसे भीप्रभावशाली, सिद्धिप्रद तथा चैतन्य बना दिया जाता है। प्रसिद्ध तंत्र ग्रन्थ 'मंत्रमहोदधि' तथा 'शारदा तिलक तंत्र' में मंत्र के 10-संस्कारों को सम्पादित करने केलिए जप की विधियां बताई गई है। सामान्य रूप से मंत्र संस्कारों की प्रचलितविधियों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

(1) जनन :- केशर, चन्दन अथवा भस्म से बनाए गए मातृकायंत्र से मंत्र-वर्णों का पर्याय क्रम से उद्धार करना।

(2) जीवन :- सभी मंत्र वर्णों को पंक्तिक्रम से प्रणव से सम्पुटित करके 100 बार जपना ।

(3) ताडन :- मंत्र के वर्णों को भोजपत्र पर लिखकर प्रत्येक वर्ण को चन्दन, जल तथा वायुबीज से 100-बार ताड़ित करना।

(4) बोधन :- उक्तानुसार मंत्र वर्णों को लिखकर मंत्र के वर्ण संख्या के बराबर कनेर पुष्पों से अग्निबीज से हनन करना।

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

(5) अभिषेक :- कुशमूल से भोजपत्र पर मंत्र को लिखकर मंत्र वर्णों की संख्या के बराबर पीपल के पत्तों से सिंचन करना।

(6) विमलीकरण :- सुषुम्ना के मूल तथा मध्य में मंत्र का ध्यान करके ज्योतिमंत्र से जलाना।

(7) आप्यायन :- भोजपत्र पर लिखे मंत्र को ज्योतिमंत्र का 108-जप करके अभिमंत्रित करना।

(8) तर्पण :- उक्तानुसार मंत्र लिखकर मंत्र की वर्ण संख्या में ज्योतिमंत्र से मधु से तर्पण करना।

(9) दीपन :- अपने मूलमंत्र को प्रणव माया तथा लक्ष्मी बीज से सम्पुटित करके 108 बार जपना।

(10) गोपन :- अपने मंत्र को गुप्त रखना तथा मंत्र जपते हुए अपने मन तथा प्राण का सुषुम्ना में लय करना।

जिस प्रकार सद्गुरू से प्राप्त मंत्र अत्यन्त गोपनीय होता है उसी प्रकार मंत्र के 10-संस्कारों को भी गोपनीय तथा केवल गुरूमुख से ज्ञातव्य रखा गया है।

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष: 9044016661

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

।। मंत्र-सिद्धि हेतु पुरश्चरणकाल में नियमों का पालन ।।

शक्ति उपासक के ब्यवहार, आचरण, अनुशासन तथा नित्यप्रति के कर्तव्यों के लिए शास्त्र द्वारा विशेष रूप से विधि-निषेधों का प्राविधान किया गया है जिनका दीक्षा के उपरान्त शक्तिसाधक को मन, वचन तथा कर्म से सदैव तथा सर्वत्र अनुपालन करना आवश्यक होता है। पुरश्चरणकाल में इननियमों का अनुपालन किए बिना कोटि मंत्र-जप एवं समस्त प्रयासों के बावजूद भी मंत्र सिद्धि हो पाना असम्भव है। साधक को जिन निर्देशों का पालन करना होता है उनमें से प्रमुख है:-

(1) साधक को यह विश्वास रखना चाहिए कि जो मंत्र है वही देवता है तथा जो देवता है वही गुरू है। इनमें से किसी का भी पूजन-अर्चन करने का फल भी समान ही है।

"यथादेवस्तथा मंत्रो-यथामंत्र तथा गुरू

देव मंत्र, गुरूणांच-पूजाया सदृंश फलम्" (कुलार्णव तंत्र)

(2) अपने गुरू में भगवान शिव की भावना करनी चाहिए न कि सामान्य मनुष्यकी क्योंकि जो साधक अपने गुरू को सामान्य मनुष्य

समझता है उसे न सिद्धि, नज्ञान और न मोक्ष ही प्राप्त होता है :-

"मोक्षो न जायते देवि-मानुषे गुरू भावनात्।

गुरूरेक: शिव: प्रोक्त:-सोहं देवि न संशय:।।"

(3) जप, ध्यान तथा उपासना हेतु साधक को सदैव अपनी भावना को भ्रम रहित,संशय रहित, शुद्ध, सात्विक तथा श्रद्धायुक्त रखना चाहिए क्योंकि शुद्ध भावना हीसिद्धि प्रदाता होती है :-

"भावेन लभते सर्वं-भावेन देव दर्शनम्

भावेन ....तस्मात् भावावलम्बनम्।।" (रूद्रयामल तंत्र)

(4) साधक को जप करते समय गुरू से प्राप्त मंत्र तथा उसकी अधिष्ठात्रीमहाशक्ति कुण्डलिनी का सुषुम्ना विवर में प्रकाश रूप में ध्यान करना चाहिए तथाउनको मूलाधार से सहस्रार चक्र तक ऊपर-नीचे ले जाने का अभ्यास करनाचाहिए। मंत्र के प्रत्येक वर्ण का ध्यान तथा उसके अर्थ का भी चिन्तन करते हुएजप करना चाहिए।

(5) साधक को दास बनकर नहीं वरन् अपने को शिव का अंश समझकर (शिव केसाथ एकता) माँ की उपासना करनी चाहिए।

(6) किसी भी प्रकार के भ्रम-संशय से मुक्त रहने के लिए अपने गुरूक्रम-उपासनाक्रम से सम्बन्धित शास्त्रों (ग्रन्थों) के अतिरिक्त किसी अन्य उपासना-ग्रन्थों का अध्ययन नहीं करना चाहिए परन्तु अन्य उपासना ग्रन्थों तथा विधियों कीनिन्दा भी नहीं करनी चाहिए।

(7) किसी अदीक्षित व्यक्ति को अपनी उपासना, जप, पूजा तथा ध्यान के सम्बन्धमें कुछ नहीं बताना चाहिए। पुरश्चरण काल में विशेष अनुभव, चमत्कार अथवास्वप्न होने पर अपने गुरूदेव को अवश्य बताना चाहिए।

(8) अपनी साधना के परिणाम की आशा त्यागकर पूर्ण समर्पण तथा दृढ़ भावनाके साथ गुरू द्वारा उपदिष्ट क्रम से साधना में तत्पर रहना चाहिए।

(9) पुरश्चरण की अवधि में खान-पान (भोजन) का विशेष ध्यान रखना चाहिए। कहा जाता है 'जैसा अन्न-वैसा मन' अर्थात् भोजन जिस प्रकार का होगा उसी प्रकार के विचार मन में उत्पन्न होंगे तथा साधक की तपस्या को तदनुसार प्रभावित करेंगे। शास्त्रों में बताया गया है कि साधक को अपनी पाचन क्षमता, शारीरिक एवं मानसिक अवस्था के अनुसार ही अनुकूल भोजन का चयन करना चाहिए। जिस साधक को जो गुरू-क्रम प्राप्त हुआ हो उसी अनुसार भोजन का

पुरश्चरण करना चाहिए। इन दिव्य स्थानों पर जप करने का फल इस प्रकार बताया गया है -

"गृहे जप समं प्रोक्त:-गोष्ठे शतगुणासु स:।"

जबकि अन्य ग्रन्थों में लिखा गया है -

"गृहे शतगुंण विन्ध्याद्-गोष्ठे लक्षगुंण भवेत्

कोटि देवालये पुण्यं-अनन्तं शिव सन्निधौ।"

(अर्थात् अपने घर में जप करने से अधिक फल गोशाला में, गोशाला से अधिक फल एकान्त उद्यान में, एकान्त उद्यान से अधिक पर्वत शिखर पर, पर्वत शिखर से अधिक पुण्यक्षेत्र में, पुण्यक्षेत्र से अधिक फल देवालय में, तथा शिव सान्निध्य में जप का अनन्त फल मिलता है।)

।। सिद्ध पीठों में पुरश्चरण ।।

तंत्र-शास्त्रों में उन सभी सिद्ध तथा महासिद्ध पीठों का विवरण दिया गया है जहाँ पुरश्चरण करने से शीघ्र मंत्र-जागृत हो जाता है। चार धाम, द्वादश ज्योतिर्लिंग तथा 51-शक्तिपीठों के अतिरिक्त भी भगवान

निर्णय किया जा सकता है। यह भी विशेष ध्यान रखना होता है कि जो भी खाद्य पदार्थ खाये जावें वे सब अपने द्वारा अर्जित धन से खरीदे जायें। किसी व्यक्ति द्वारा दान दिए गए अन्नादि को कदापि ग्रहण नहीं करना चाहिए। इस विषय पर शास्त्र का बचन है कि –

"जिह्वा दग्धा परान्नेन-हस्तौ दग्धो परिग्रह

मनो दग्धो परस्त्रीभि: कथं सिद्धि वराननेे।"

(हे पार्वती! जिस साधक की जीभ पराया अन्न खाकर जल गई हो, जिसका हाथ पराया अन्न ग्रहण करके जल गया हो, जिसका मन परस्त्री-भोग की कामना से जल गया हो उसकी मंत्र सिद्धि कैसे हो सकती है।)

(10) पुरश्चरण काल में दीर्घकाल तक जप में बैठने के लिए उपयुक्त आसन कीभी आवश्यकता होती है। आसन का चुनाव भी अपने इष्ट मंत्र तथा अधिष्ठात्री देवीकी साधना के अनुरूप किया जाता है। वीर साधना (श्मशान साधना) हेतु उपयुक्तआसन केवल गुरूमुख से जाने जा सकते हैं। घर में प्रयुक्त होने वाले आसनों मेंरक्तकम्बल, कुशासन, मृगचर्म, व्याघ्र-चर्म पर बैठकर साधना करने का उल्लेखशास्त्रों में मिलता है। साधक को पद्मासन तथा सिद्धासन में बैठकर जप काअभ्यास करना चाहिए। पुरश्चरणकाल में अस्वस्थता की अवस्था में

पैर फैलाकरतथा लेटकर भी जप किया जा सकता है। शास्त्रों का उद्घोष है कि आसन तथाप्राणायाम भी मुख्य साधना में गौण हो जाते हैं क्योंकि अन्तर्जागृति की अवस्था हीसर्वश्रेष्ट है-

"असिका बन्धनं नास्ति-नासिका बन्धनं नहिं

न पद्मासन गतो योगी-न नासाग्र निरीक्षणम्।।"

।। मंत्र-जप हेतु उपयुक्त स्थान ।।

इस विषय पर 'दीक्षा रहस्य' नामक अध्याय के अन्तर्गत 'दीक्षा हेतु उपयुक्त स्थान' शीर्षक में कुछ लिखा गया है क्योंकि जिन पवित्र स्थानों पर दीक्षा प्राप्त करने से शीघ्र साधना सफल होती है उन्हीं स्थानों पर जप करना भी शुभप्रद माना गया है।

"पुण्य क्षेत्रं नदी तीरं-गुहा पर्वत मस्तकम्

तीर्थ प्रदेशा सिन्धूनां-संगम: पावनं बनम्"

(पुण्य क्षेत्रों, नदियों के किनारे, पर्वतों की चोटियों, समुद्रों के संगम स्थल, गंगा-सागर संगम, घने जंगल, उद्यान, देवस्थान, समुद्रतट, विल्व वृक्ष, पीपलवृक्ष, बटवृक्ष, तथा धात्रीवृक्ष के नीचे तथा गोशाला में

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

"सर्वेषां कर्मणां श्रेष्ठं-जपज्ञांन महेश्वरि

जप यज्ञो महेशानि-मत्स्वरूपो न संशय:

जपेन देवता नित्यं-स्तूयमाना प्रसीदति

प्रसन्ना विपुलां कामान्-दद्यान्मुक्ति च शाश्वतीम्"

(हे देवि! जप करना सर्वश्रेष्ट कर्म है। जपयज्ञ स्वयं मेरा ही स्वरूप है। जप करने से देवता प्रसन्न होकर समस्त कामनाओं की पूर्ति करके मुक्ति भी प्रदान करते हैं)

मनु महाराज का कथन है :-

"विधि यज्ञाज्जपयज्ञो-विशिष्टो दशभिगुर्णै:"

आगम शास्त्रों में जप की महिमा का वर्णन निम्न प्रकार किया गया है:-

"जप यज्ञात्परो यज्ञो-नापरोस्तीह कश्चन:

तस्मात्जपेन धर्मार्थं-काम मोक्षाश्च साधयेत्"

(जप यज्ञ के समान श्रेष्ट कुछ भी नहीं है। अत: जप करके धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष की प्राप्ति करनी चाहिए।)

अन्यच्च :-

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

"सर्वयज्ञेषु सर्वत्र-जप यज्ञ: प्रशस्यते

तस्मात्सर्व प्रयत्नेन-जप निष्ठापरो भवेत्"

(अत: समस्त प्रयास करते हुए जप में पूर्ण निष्ठा रखनी चाहिए। सर्वत्र तथा सर्वकाल में जप करना प्रशस्त है।)

भगवान श्रीकृष्ण जप की श्रेष्टता का सम्पादन करते हुए कहते हैं कि मैं ही यज्ञो में सर्वश्रेष्ट जपयज्ञ हूँ:-

"यज्ञानां जप यज्ञोस्मि।"

आचार्यपाद शंकराचार्य जी जप को ही योगक्षेम का कारण मानते हैं :-

"तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदम्

जन: को जानीते जननि जपनीयं जप विधौ"

आचार्यपाद के अनुसार जप यज्ञ अत्यन्त कठिन एवं गुरूमुखगम्य है। जप किसी मंत्र विशेष का किया जाता है तथा मंत्र अक्षरों से बनता है। अक्षर = अ+क्षरण अर्थात् जिसका नाश नहीं होता वही अक्षर है तथा मंत्र ही अक्षर ब्रह्म है। अक्षरों से बना मंत्र इसी कारण 'शब्दब्रह्म' कहा जाता है। वेदपाठ एवं स्तोत्रादि का उच्च स्वर से पाठ करते समय समीपवर्ती वातावरण भी पवित्र हो जाता है तथा आनन्द की प्राप्ति

कराता है।

शास्त्रों में जप के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन करते हुए उनकी पारस्परिक महत्ता का प्रतिपादन किया गया है :-

"वाचिकश्च उपांशुश्च-मानस स्त्रिविधि स्मृत:

त्रयांणा जप यज्ञांना-श्रेयान् स्यादुत्तरोत्तरम्"

अर्थात् वाचिकजप से श्रेष्ट उपांशु जप तथा उससे श्रेष्ठ मानसिक जप माना गया है। जब तक सतत अभ्यास द्वारा साधक की वृत्ति अन्तमुर्खी नहीं हो जाती तब तक जप का उद्देश्य सफल नहीं हो सकता है। जप की सिद्धि का सम्बन्ध प्राणों(वायु) के आयाम (रोकना) से भी होता है। जप जितना अन्तमुर्खी होता जायेगा उस समय श्वास की गति उतनी ही कम (मन्द गति) हो जायेगी तथा एक आनन्द की अनुभूति होगी।

"मनसा य: स्मरेस्तोत्रं वचसा वा मनु जपेत्।

उभयं निष्फलं देवि..... ।।

(स्तोत्र को मन ही मन पढ़ना तथा जप को वाणी से उच्चारण करना निष्फल हो जाता है।) जप हमेशा मानसिक होना चाहिए।

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

"उत्तमो मानसो देवि! त्रिविध: कथितो जप:"

अभ्यास करते-करते साधक को निम्न छ: प्रकार की स्थितियों से गुजरना पड़ता है यथा- परातीतजप, पराजप, पश्यन्ती जप, मध्यमा जप, अन्त:वैरवरी जप तथा बहिरवैरवरी जप। जिस जप में जीभ तथा होठों को हिलाया जाता है वह जप बहिरवैरवरी के अन्तर्गत आता है। जब जिह्वा तथा होठों का संचालन किए बिना जप आरम्भ हो जायेगा उस समय जप के स्पन्दनों का प्रवाह हृदय चक्र की तरफ होने लगेगा तथा श्वास की गति अत्यन्त धीमी हो जायेगी। बाहर की तरफ श्वास चलना लगभग बन्द हो जायेगा। गुरूमुख से प्राप्त चैतन्य मंत्र का जप करते समय साधक को इस स्थिति का लाभ अल्प समय में ही मिलने लगता है। यह केवल स्वानुभव का विषय है। ऐसा जप साधक के मूलाधार चक्र, स्वाधिष्ठान तथा मणिपूरक चक्र में स्वयं उच्चरित होता हुआ प्रतीत होता है। यह स्थिति मध्यमा जप सिद्ध हो जाने पर आती है तथा वास्तविक जप का श्री गणेश यहीं से माना जाता है। ऐसी अवस्था आ जाने पर साधक की वृत्ति अन्तमुर्खी हो जाती है और तब जप करने के लिए किसी आसन विशेष की आवश्यकता नहीं रह जाती। इस जप का साधक लेटे, सोये, उठे, बैठे, खाते-पीते भी अनुभव कर सकता है। शास्त्र बताते हैं कि मध्यमा जप की स्थिति आ जाने पर अनाहत चक्र में कई तरह के नाद भी उत्पन्न होते हैं जिन्हें जप कर्ता सुन सकता है। प्राय: साधक को अपना मंत्र अन्दर से स्वयं ही सुनाई देता है।

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष: 9044016661

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

मध्यमा स्थिति के पश्चात् जप की तीसरी भूमिका पश्यन्ती पर साधक पदार्पण करता है। ऐसी स्थिति में साधक को अपना मंत्र आज्ञाचक्र (भ्रूमध्य) में प्रतिविम्बित होता दिखाई देता है। आचार्यपाद शंकराचार्य जी ने पश्यन्ती जप का स्थान आज्ञाचक्र बताते हुए लिखा है :-

"तवाज्ञाचक्रस्थं तपन शशि कोटि द्युतिधरं

परंशम्भु वन्दे परिमिलत पार्श्वं परिचिता।।   (सौन्दर्य लहरी)

जप से उत्पन्न नाद की स्थिति केवल विशुद्धि चक्र (कंठ स्थान) तक ही सीमित रहती है। उसके बाद आज्ञा चक्र में स्वमंत्र प्रकाशमय अवस्था में दिखाई देता है। अत: आज्ञाचक्र के ऊपर के चक्रों में स्वमंत्र का दर्शन होना ही पश्चन्ती जप का सिद्ध हो जाना माना जाता है।

जब स्वमंत्र के सभी स्वर-व्यंजन सकुंचित होकर बिन्दु में लय हो जाते हैं तो यह अवस्था 'पराजप' की अवस्था कही जाती है। इस स्थिति को प्राप्त साधक परमानन्द की अनुभूति करने लगता है। इस अवस्था का वर्णन भगवान् श्री कृष्ण ने भी किया है :-

"युन्जन्नेवं सदात्मांन-योगी विगत कल्मश:

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

सुखेन ब्रह्म संस्पर्श-अत्यंन्त सुख मश्नुते।।" (गीता)

इससे पूर्व के श्लोक में कहा गया है कि जिस प्रकार कछुआ अपने सभी अंगो को अपने में ही समेट कर छोटा हो जाता है उसी प्रकार मंत्र के वर्णादि भी बिन्दु में लय हो जाते हैं। इस बिन्दु का कम्पन ही आत्मसाक्षात्कार की अनुभूति दिलाता है जिसे ब्रह्म संस्पर्श का आनन्द मिलना कह सकते हैं।

मंत्र के अवयवों का शुद्ध उच्चारण जिह्वा तथा हौठों के विभिन्न स्थानों पर स्पर्श के कारण होता है परन्तु मंत्र के अद्धर्मात्रा में स्थित बिन्दु का उच्चारण सही रूप से तभी हो पाता है जब श्री सत्गुरू शिष्य को इसे उच्चारित कर बताते हैं। इसके सम्बन्ध में निम्न प्रमाण है -

"अमोघमव्यंजनमस्वंर च-अकंठ ताल्वोष्टनासिकं च

अरेफ-जातोपयोष्ठ-वर्जितं-यदक्षरो न क्षरेत् कदाचित।।"

सहस्रार एवं उसके ऊपर के चक्रों-स्थानों पर ब्रह्मसंस्पर्श ही जप की अनुभूति कराता है। यहाँ पर समस्त बाह्य कियाऐं नष्ट हो जाती हैं। इस विषय पर आगम बचन है :-

"प्रथमे वैखरी भावो-मध्यमा हृदये स्थिता

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

भ्रूमध्ये पश्यन्ती भाव:-पराभाव स्वद्बिन्दुनी।।"

महानिर्वाण तन्त्र में इनका सम्बन्ध वहिरअर्चन-ध्यानादि के साथ निम्न प्रकार वर्णित हैं -

उत्तमो ब्रह्म सद्भावो यह परावाक् नाम अन्तिम स्थिति है।

ध्यान भावस्तु मध्यम यह पश्यन्ती स्थिति है।

जप-पूजा अधमा प्रोक्ता यह मध्यमा जप की स्थिति है।

बाह्यपूजा अधमाधमा यह बहिर्बैखरी स्थिति है।

इस प्रकार सतत जप से आत्म-साक्षात्कार रूपी लक्ष्य की प्राप्ति हो जाती है। पूर्वोक्त अवस्थाओं की प्राप्ति हेतु हठयोगादि का अवलम्बन न केवल दुरूह वरन् परम हानिकारक भी सिद्ध होता है। आगम शास्त्र जप की सिद्धि के लिए निम्न उपायों का वर्णन करने हैं :-

(1) सिद्ध गुरू की प्राप्ति

(2) स्वगुरूक्रम का यथोक्तचिन्तन

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष: 9044016661

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

(3) शुद्ध संस्कारों की प्राप्ति

(4) मल निवृत्ति (आणव, मायिक, कार्मिक)

(5) वीर साधना का अवलम्बन

(6) पूंर्वाग तथा उत्तंराग जप।

उपरोक्त सभी उपायों का विस्तृत वर्णन आगम शास्त्रों में मिलता है जिनके अवलोकन से ज्ञात होता है कि ये सभी अंग सिद्ध भूमिका में आरोहण करने के लिए नितान्त आवश्यक हैं। मूल मंत्र जप के साथ ही जप के पूंर्वाग तथा उत्तरांग मंत्रो का जप भी करना पड़ता है जो कि निम्नानुसार है :-

(1) मंत्र के शिव का जप (2) कुल्लका मंत्र (3) मंत्र उत्कीलन (4) संजीवन मंत्र(5) मंत्र शिखा (6) मंत्र चैतन्य (7) मंत्रार्थ (8) मंत्र शोधन (9) मंत्र संकेत (10)मंत्र ध्यान (11) सेतु (12) महासेतु (13) निर्वाण मंत्र (14) दीपिनी मंत्र (15)चौरमंत्र (16) मुख शोधन (17) मातृका पुटित जप।

स्थूल से सूक्ष्म की तरफ अग्रसर होना ही मंत्र जप का रहस्य है। जिसके लिए आगम शास्त्र कहते हैं :-

"पूजा कोटि समं स्तोत्रं, स्तोत्र कोटि समो जपः।

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष: 9044016661

।। मंत्रतत्त्व रहस्य ।।

जप कोटि समो ध्यानं-ध्यान कोटि समो लय:।।"

अर्थात् वाहरी पूजा से स्तोत्रपाठ करना श्रेष्ट है। स्तोत्रपाठ से जप करना करोड़ गुना श्रेष्ट है। जप से ध्यान करना श्रेष्ट है। ध्यान से करोड़ गुना फलदायक 'लय' अवस्था (आत्मसाक्षात्कार) प्राप्त हो जाना है। जप के सम्बन्ध में उक्तानुसार संक्षेप में विवेचन किया गया है परन्तु समस्त प्रयासों के बावजूद भी मंत्र वही सिद्ध होगा जो शिष्य को सक्षम गुरू से प्राप्त हुआ होगा। आगम शास्त्र कहते हैं:-

सिद्ध मंत्र गुरोर्दीक्षा-लक्ष मात्रेण सौख्यदा

महामुनि मुखान्मत्रं-श्रवणाद् भुक्ति-मुक्तिदम्

जपहीन गुर्रोर्वक्त्रा-पुस्तकेन समं भवेत।" (महाकाल संहिता)